मौसम

मो. आरिफ

मौसम

https://www.hindiadda.com/mausam/

मौसमे बहार और अब्बू। और अम्मी। मैं। इकबाल और राशिदा भी। मुझे मालूम है अब्बू आजकल एक नॉविल लिख रहे हैं - उर्दू में। नाम रखा है बहारों का मौसम। नाम कुछ अजीब लगता है, पर अब्बू का मामला है कौन बोले। मुझे उर्दू कुछ खास आती नहीं। इकबाल को तो एकदम नहीं। इकबाल मेरा भाई है। पर राशिदा के मजे हैं। उर्दू में माहिर और अब्बू की चीफ एडीटर। कभी नॉविल की कहानी बताती है तो लगता है अब्बू अपने बारे में लिख रहे हैं। राशिदा मेरी बहन है।

अब्बू के इस फन का पता सिर्फ राशिदा को था। हम तो उन्हें एमएससी फिजिक्स ही मानकर चलते थे। साइंस और अफसानानिगारी को आमतौर पर एक साथ नहीं देखा जाता। जो भी हो, लिखना अब्बू ने हाल-फिलहाल में शुरू किया होगा। नहीं तो अब्बू को अपने नॉविल का नाम बदलकर 'दुश्वारियों का मौसम' रखना चाहिए। अब्बू ने कहला भेजा कि उसे अदब की समझ नहीं है। खास तौर से उर्दू अदब की तो बिल्कुल नहीं। अपनी टाइटिल अपने पास रखे। मैं और राशिदा खूब हँसे।

हमारा घर बड़ा दोस्ताना है। इस मामले में कि हम लोग हँसने का बहाना ढूँढ़ ही लेते हैं और इस मामले में भी कि राशिदा और अम्मी जब सलवार-सूट पहनकर कहीं शादी ब्याह में निकलती हैं तो दोनों छोटी-बड़ी बहनें लगती हैं और वही हाल हम दोनों भाइयों और अब्बू का। एक सफारी सूट तीनों पहन सकते हैं। तीनों खड़े हो जाएँ तो कहें - वालिद फर्जद कम, भाई-भाई ज्यादा। इकबाल जो हमारे और राशिदा के बीच का है, अब्बू से दो इंच ऊपर हो गया है।

हम एक-दूसरे से बहुत खुले हुए भी हैं। खूब बातें होती हैं। एक-दूसरे की खिंचाई-सिंचाई भी। बस अब्बू ही ज्यादातर संजीदा बने रहते हैं। अब्बू को हँसते हुए बहुत कम देखा है। अब्बू तो शायद अम्मी से भी छेड़छाड़ नहीं करते हैं। हाँ, राशिदा जरूर अपवाद है। उसके साथ उनके चोंचले ही रहते हैं। पर जल्दी ही वे फिर से अपनी बनायी हुई गुफा में दाखिल हो जाते हैं। उनकी संजीदगी के बारे में हमारे घर में दो राय हैं। अम्मी और राशिदा मानती हैं कि अब्बू कुदरतन संजीदा हैं। मेरा और इकबाल का खयाल है कि अब्बू की गम्भीरता उनके स्वभाव का हिस्सा नहीं है, बल्कि इसे उन्होंने ओढ़ रखा है। यों तो वाल्दैन के बारे में कोई ऐसी-वैसी टिप्पणी करना अच्छा नहीं माना जाता, पर मैं एक बात जरूर कहूँगा - अब्बू के बारे में। गुस्ताखी माफ, उनके अन्दर एक अजीब-सी हेकड़ी है। वह झूठे स्वाभिमान के शिकार हैं और ट्रेजडी यह है कि उन्हें इन बातों का पता नहीं है। वे आदतन दूसरे की बुराई कर बैठते हैं। खुद तो कुछ नहीं बने, पर दूसरे की नौकरी चाहे कितनी ही बड़ी

क्यों न हो, भाव नहीं देते। मुँह पर ही बोल देते हैं। उनकी इन बातों से मुझे तो बहुत कोफ्त होती है, पर लिहाज में कुछ कहता नहीं। पीठ पीछे अम्मी हम लोगों से शिकायतें तो करती हैं पर खुद उन्हें रोक नहीं पाती हैं।

पर हम चारों मतलब कि अम्मी भी - उनकी बड़ी इज्जत करते हैं। अब्बू के लिए हमारे दिलों में इज्जत ही नहीं प्यार भी है। अम्मी से ज्यादा अब्बू एजुकेशन के लिए जिम्मेदार हैं। हमेशा लगे रहे कि तीनों बच्चे पढ़-लिख जाएँ ऊँची तालीम हासिल करें और ऊँचे ओहदों पर पहुँचें। पर इज्जत और प्यार है तो सिर्फ इसलिए नहीं कि उन्होंने हमें ऊँची तालीम हासिल करने में मदद की। वैसे तो इज्जत और प्यार के हकदार वे तभी हो गये जब वे हमारी वजूद की वजह बने। असल में, इन सबसे बढ़कर हम उनकी मेरिट के कायल हैं। हर क्षेत्र में उनका ज्ञान और उनका दखल काबिले तारीफ है। जो कुछ उन्होंने स्टूडेंट लाइफ में पढ़ा था और कैरियर परीक्षाओं के लिए याद किया होगा, कुछ भी नहीं भूले हैं। हमें कई बार फख्र होता है कि हमारे अब्बू कितना कुछ जानते हैं। कितने बौद्धिक हैं, कितने वेल इनफार्म्ड और अप-टू-डेट हैं।

एक बात और। मेरे अब्बू दूसरे अब्बुओं की तरह बूढ़े और रिटायर्ड कभी नहीं लगे। गोरे, नौजवान, स्मार्ट और हमेशा फिटफाट। इस मामले में अपने तीनों बच्चों के आदर्श। पर हमें खीझ और शर्म तब आती है जब वे हर किसी में लूपहोल ढूँढ़ने लगते हैं, हर किसी के पेशे और नौकरी को तुच्छ बताने लगते हैं। अक्सर मैं अपने दोस्तों के घर जाता हूँ लेकिन अपने दोस्तों के पिताओं को अब्बू की तरह बिहैव करते कभी नहीं देखा। अब्बू के एक खास दोस्त प्राइमरी स्कूल के टीचर रहे हों। अब्बू का हमारी जिन्दगी में होना एक अजीब-सा भाव जगाता है। कैसे बताऊँ।

बकौल अम्मी, अब्बू अखबार से ऐसा इश्क फरमाते हैं कि कोई मियाँ अपनी नयी-नवेली बीवी से क्या फरमाएगा। अब्बू कहते हैं, अखबार उनकी ताकत है। मुझे याद आ रहा है कि जब मैं छोटा था तो अब्बू कहीं बाहर रहकर पढ़ते थे। शायद एमएससी कर रहे थे। महीने मे एकाध बार घर आते थे। मुझे यह भी याद आ रहा है कि अम्मी कभी-कभी ऐसी बात बोलती थीं - शायद उन्होंने एक जुमला गढ़ रखा था - जिसका अर्थ होता था भला ये भी कोई बात हुई। बाप-बेटे एक साथ पढ़ाई पूरी कर रहे हैं।

राशिदा ने अब्बू की स्टूडेंट लाइफ नहीं देखी है। मैंने देखी है। तभी तो वह कभी-कभी पुरानी फिल्मों की हिराइनों की तरह आँखें मटकाते हुए बोलती है - अब्बू और भाईजान क्लासफेलो हैं। राशिदा की बच्ची!

मुझे अच्छी और ऊँची तालीम के लिए जब ननिहाल भेजे जाने की बात हुई तो अब्बू ऐसे गरजे कि पूछिए मत। पर अम्मी सब जानती थीं। यहाँ मैं यह कहना चाह रहा हूँ कि वह जानती थीं कि गरजने और बरसने में क्या रिश्ता है। नाना पेशकार थे। अम्मी को बहुत चाहते थे। अब्बू भुनभुनाते रहे पर वे मुझे ले गये। अम्मी ने चैन की साँस ली। असल में, अम्मी ने अब्बू की मदद की।

एमएससी करने के बाद मैं वहीं फैजाबाद में एक प्राइवेट स्कूल में पढ़ाने लगा। अब्बू मुझे हिकारत से देखते, जैसे मैंने कोई पाप किया हो। किसी सरकारी नौकरी के लिए ट्राई करने के लिए बड़बड़ाने लगे। घंटों लेक्चर दिया।

फिर ठंडे हुए तो पूछा - अच्छा बताइए क्या पढ़ाते हैं? मेरे यह कहने पर कि साइन्स, मुझसे साइन्स पर सवाल पूछे और मुझे गलत साबित किया। इनकी यही आदत है। अपने बच्चों के साथ कम्पटीशन पर उतर आते हैं। जीतने की कोशिश करते हैं। अपने एमएससी फर्स्ट क्लास पर इतना गुमान कि मौके-बेमौके अपने बच्चों को ही शर्मिन्दा करने पर आमादा हो जाते हैं। अजीब कैफियत हो जाती है इनकी। खयाल नहीं रखते कि वे बीस पार लड़कों और शादी लायक लड़की के बाप हैं। कैसी कुंठा, कैसी नादानी, कैसी नास्मझी में जिन्दगी गुजार रहे हैं अब्बू। मेरे दोस्तों तक से अपना ज्ञान बघारने लगते हैं और उनसे मुकाबला करते हैं। ऐसे मौकों पर वे मुझे बेहद कॉमिक लगते हैं।

मैं ननिहाल में रह रहा हूँ। इकबाल ने घर पर ही रहकर अपना ट्यूशन जमा लिया है। राशिदा भी ट्यूशन के साथ कपड़े सिलती है। अम्मी कपड़े सिलने के अलावा आँगनबाड़ी में पढ़ाती हैं। माशाअल्लाह कोई दुश्वारी नहीं है। सब अच्छा चल रहा है। पर अब्बू बेकार हैं। लेकिन ऐसा वे नहीं चाहते हैं। वे चाहते हैं कहीं लगना। जल्द से जल्द घर में अपनी कमाई देना चाहते हैं। टीचर, क्लर्क या... अल्लाह माफ करे... चपरासी ही बनकर...। बेकारी उन्हें काटती है। खा रही है उन्हें घुन की तरह। पर दिखाते हैं ऐसा जैसे उन्हें बेरोजगारी का गम न हो। कुछ नौकरियों के लायक वे अभी भी होंगे। कुल उम्र सैंतालीस की है। हाईस्कूल सर्टीफिकेट के अनुसार पैंतालीस ही ठहरते हैं।

इस बार ईद में अब्बू को मैंने सफारी सूट दिया। अब्बू जवान तो हैं ही, अच्छे दिखने लगे। मेरे, इकबाल, राशिदा और अम्मी के पैसों से खूब ईद मनी। मैं वापस जाने को हुआ तो मुझे पास बुलाकर बोले, "पता करना तुम्हारे यहाँ कोई जगह हो तो दो-चार घंटे वक्त दे सकता हूँ। पैसे के लिए नहीं भाई।" मैंने अम्मी की ओर देखा। लगा जैसे उनके ऊपर घड़ों पानी पड़ गया है। फिर बोले, "मेरा ईद वाला जूता लेते जाओ।" मुझे पता था अम्मी के पैसों का है। क्यों दे रहे हैं, क्यों लेने के लिए जिद कर रहे हैं अब्बू। मेरे सूट के बदले में तो कुछ न कुछ करना ही था। सो जूते पर अड़ गये। मैं क्या करता। बाटा का सॉफ्ट लेदर मेरे पैरों में जम गया।

इकबाल को कोई क्या कहे। बचपन का कोलम्बस। पूरा उस्ताद। खोजता फिरेगा... बस। कभी लकड़ी के बक्से में दादा की रौबदार मुँछों वाली तस्वीर तो कभी अब्बू के बचपन की गेटिस वाली पैंट। और कभी अब्बू-अम्मी की अलमारी से उनकी शादी का बित्ते भर का अलबम। अम्मी तो कुछ खास नहीं... पर अब्बू... हाय हाय... कानों के ऊपर तक फैले बाल और चौड़े बॉटम वाली पैंट। मैं तो चुप रहता पर राशिदा और इकबाल बाज आएँ तब न।

मेरा ख्याल है, हमारी कुछ दोपहरियाँ तो यही सब खोजबीन करते कटी होंगी। फिर जब मैं फैजाबाद शिफ्ट हो गया तो भी इकबाल की कोलम्बसगिरी जारी रही। गर्मियों में मैं घर आया था। तभी इकबाल पढ़ता जाता और राशिदा आहें भरती। एमएससी फिजिक्स, फर्स्ट क्लास फर्स्ट। बीसएससी गुड सेकेंड डिवीजन। लेकिन फिर इंटर और हाईस्कूल दोनों ही प्रथम श्रेणी में। और सबसे नीचे रखी थी उनकी बीएड की डिग्री जिसके बारे में उन्होंने कभी बताया ही नहीं था। अपने आपको कभी एमएससी बीएड नहीं कहा। हमेशा कहते एमएससी फिजिक्स, फर्स्ट क्लास फर्स्ट।

उस फाइल में कुछ और सबूत थे। तमाम काल लेटर्स, जहाँ फिजूल में अब्बू ने इंटरव्यू दिये होंगे। अखबारों की कतरनें जिनमें नौकरियाँ थीं, पर अब्बू के लिए नहीं। मास्टरगीरी से लेकर प्राइवेट कम्पनियों में दर्जनों अर्जियों के सबूत। एक मशीन बनाने वाली कम्पनी का लेटर भी मौजूद था। 550 रूपये प्रतिमाह तनख्वाह पर उन्हें नौकरी का ऑफर था। गुस्सा गये होंगे सैलरी देखकर। तभी तो लाल स्याही से उसी लेटर पर लिख मारा था - उर्दू में।

राशिदा ने उस इबारत को चटखारे लेकर पढ़ा **- 1100** पर तुझे मैं खुद रख लूँ मरदूद।

अब्बू की शेखीखोरी, उनका बड़बोलापन और जॉब मार्केट में हम दोनों भाइयों की नाकामयाबियाँ - कई बार राशिदा को अपनी फुलझड़ियाँ छोड़ने के आसान मौके मुहैया करा देतीं।

ऐ जी सुनो इकबाल, अब्बू की तर्ज पर भाई जान भी इंडियन एडमिनिस्ट्रेटिव सर्विस से नीचे की नौकरियों को लात मारते फिर रहे हैं... तू क्यों नहीं कहीं हेडक्लर्क बन जाता। अबकी ईद में सिल्क का सूट बनवा दे मेरे भाई...।

इकबाल चुप रहने वाला बड़ा भाई नहीं था। उसने भी राशिदा को छेड़ दिया, "तू तो हर हफ्ते नये सूट पहनती है राशिदा। सिलाने वालों को क्या मालूम कि राशिदा की उतरन ही पहनते हैं नये सूट के नाम पर।" अब मेरी बारी थी। मुझे मालूम था राशिदा ऐसा करती है। पर इकबाल जैसा ब्लंट नहीं हूँ। मैंने कहा, "राशिदा, दरवाजे पर छोटा-सा बोर्ड जो तुमने टाँग रखा है न सिलाई केन्द्र का, उसमें एक बच्चे का नाम लिखवा दो -इकबाल टेलर मास्टर। इसका भी काम बन जाएगा।" राशिदा जो हँसी तो हँसती ही चली जाती थी।

फिर मैंने सोचा, अच्छा मौका है कुछ डॉयलाग-वायलॉग हो जाए। मैंने सीरियस लहजे में शुरू किया, "इस घर में दो-दो पोस्ट ग्रेजुएट हैं...।" मेरी बात बीच में काटते हुए राशिदा ने जोड़ दिया, "दोनों में एक फर्स्ट क्लास फर्स्ट और दूसरा सेकेंड क्लास सेकेंड।" मैंने बिना हँसे अपनी बात पूरी की... "और दो-दो ग्रेजुएट हैं और एक इंटरमीडियेट... कुल पाँच... पर सबके बीच में एक भी नौकरी नहीं है।"

अब इकबाल की बारी। नहीं चूका मेरा छोटा भाई। बोला, "सच कहूँगा तो भाईजान नाक-भौं सिकोड़ लेंगे।" मैंने डाँटा, "बोल बे, भाईजान को इतना भाव कब से देने लग गया।" और इकबाल बोल गया, "सारा दोष हमारे-आपके नाम में है बड़े भाई। पाँच पढ़े-लिखे, लेकिन पाँचों बेकार। क्या यह महज इत्तेफाक है, या फिर इसे बैडलक कहकर हवा में उड़ा दें?" मैंने उसका कान पकड़ते हुए कहा, "मुझे तो अपने नाम में कोई बुराई नजर नहीं आती... पर तू अपना नाम इकबाल सिंह कर ले। लग जाएगा कहीं काम से।"

अब राशिदा की बारी थी, "मैं तो सोचती हूँ... इकबाल सिंह तुम बताना तुम्हारी क्या राय है... क्यूँ नहीं अब्बू अपनी नॉविल का नाम बदलकर 'बेरोजगारी का मौसम' रख देते।"

फिर हम तीनों ऐसा दिल खोलकर हँसे कि अम्मी किचन से बाहर निकल आयीं। और राशिदा का गाल नोंचते हुए खुद भी लतीफे में शामिल हो गयीं।

अब्बू ऐसे हल्के-फुल्के मौकों पर हम सभी से दूर ही रहते।

अम्मी किचेन मे वापस चली गयीं। राशिदा की हँसी बन्द होने को नहीं आ रही थी। बोली, "खबरदार, अगर किसी ने नौकरी की बात की, अभी सब लोग और पढ़ेंगे। बस एक-एक डिग्री और, अजी इकबाल अब्बू से कहो पीएचडी पूरी करें। पीछे-पीछे हम लोग हैं।"

हँसी का फव्वारा फिर... हम तीनों का।

इस बार अम्मी किचन से बाहर नहीं निकलीं। वहीं से बोलीं, "और लिस्ट से मेरा नाम काट देना। मुझे नहीं पढ़ना-वढ़ना। तुम्हारे अब्बू बहुत पढ़े हैं।"

अम्मी को वाकई पढ़ने की जरूरत क्यों पड़ने लगी। आज तो बिल्कुल नहीं। आज जामिया अंजुमन के कुल पचास बच्चों का कपड़ा सिलने का ऑर्डर जो हाथ आ गया था। अब राशिदा को लेकर जुटेगीं और बस हफ्ते भर में पूरी तीन हजार की जुगत। कौन पढ़ता है। बहुत पढ़ लिया।

और चटोरी राशिदा। राशिदा को तो मिल गया लहलहाने का बहाना। हम सभी के लिए खुशियों का मौसम। ऐसा नहीं कि अब्बू कुछ नहीं करते हैं तो हमारे घर मे गोश्त नहीं बनता है। सबकी तरह हफ्ते में दो दिन तो जरूर। पर अब राशिदा की बच्ची इस हफ्ते पाँच दिन पकाएगी।

तो इसी तरह खाते-पकाते, हँसते-गाते चुनाव सिर पर आ गये। गोया कि वादों का मौसम और नौकरियों का मौसम अपने उफान पर।

सरकार को आनन-फानन में हजारों की तादाद में प्राइमरी स्कूलों के लिए मास्टर चाहिए। इश्तहार छपे तो दिल बल्लियों उछलने लगा। कुछ ज्यादा पेंच नहीं था। दरियादिली का आलम यह था कि इक्कीस से पैंतालीस वर्ष उम्र तक का तो कोई भी ग्रेजुएट मास्टर बन सकता है। बीस तारीख को अपनी डिग्रियों के साथ लखनऊ पहुँचो, रजिस्ट्रेशन कराओ, इंटरव्यू दो और कॉल लेटर हाथोंहाथ। पहली बार ग्रेजुएट होने के फायदे बड़े साफ-सुथरे ढंग से मुँह बाये खड़े थे।

मैं उस मौसम में फैजाबाद था। मुझे इकबाल और राशिदा की फिकर लगी। मैं खुद भी एक उम्मीदवार था। मैंने चुपके से अपने भाई इकबाल और बहन राशिदा के नाम खत डाल दिया। मैं छब्बीस साल का। मेरा भाई चौबीस का। मेरी बहन राशिदा तेईस की। सबकी बेकारी कटने वाली है।

उम्मीद तो न के बराबर थी। पर ऐसा भी होता होगा कि एक ही वक्त में एक ही घर में तीन-तीन लोगों को सरकारी नौकरी मिल जाए। कहीं-न-कहीं तो जरूर होता होगा। इस बार शायद अब्बू के घर में।

मैं बीस को अपनी रिकॉड फाइल लिये ठीक वक्त पर लखनऊ पहुँच गया। इकबाल और राशिदा भी लाइन में लगे होंगे। देखा पर दिखाई नहीं पड़े। भीड़ थी। बेशुमार लोग लाइनों में खड़े थे। अरे भाई इकबाल टीचर, कहाँ हो तुम... राशिदा टीचर... मेरी बहन, लड़कियों वाली लाइन में तुम भी नहीं दिखाई पड़ रही हो। जनाब मोहम्मद राशिद एमएससी फर्स्ट क्लास फर्स्ट की औलादो, कहाँ हो तुम लोग? मेरा खत नहीं मिला क्या?

खत तो वक्त पर मिल गया था। पर अब्बू ने अब्बूगीरी दिखा दि थी। अपने दोनों बच्चों से धोखा किया था उन्होंने। इकबाल और राशिदा को महक तक नहीं लगने दी थी मेरे खत की। खूद चले आये थे इंटरव्यू देने। अब्बू मुझसे तीन चार कदम आगे ही उसी कतार में लगे थे। ईद वाला सफारी सूट पहने, हाथ में अपनी रिकॉर्ड फाइल लिये एक-एक कदम काउंटर की ओर खिसक रहे थे।

उनको देखते ही मुझे लगा मेरे तलवों में छोटे-छोटे छेद हो गये हैं। मेरे शरीर का सारा लहू मेरे पैंरों से सरसराकर निकल रहा है।

पर बात यहीं से खत्म हो जाती तो बात ही क्या थी। बात बढ़ गयी। कोई शक नहीं कि अब्बू लगे तो कतार में थे पर मन कहीं भटक रहा था। शायद हम भाई-बहनों के बारे में सोच रहे थे। फाइल पर पकड़ ढीली पड़ी और फर्स्ट क्लास फर्स्ट के कागजात सरक गये नीचे। लहराते हुए उड़ चले... पीछे की ओर। अब्बू ने झपट्टा मारा। एक को धर दबोचा। एक मेरे आगे वाले नौजवान के सीने से फड़फड़ा रहा था। और... ऊपर वाले यह क्या कर दिया तूने... एक मेरे पैरों के पास फड़फड़ा रहा था। ओय मेरे बाप ओय इधर मत आना। प्लीज इधर नहीं। मैं पैर से सरका देता हूँ तुम्हारा पेपर...

यह भी तो हो सकता है कि मैं उनका कागज अपने पैरों से कहीं और सरका दूँ या उठाकर हजम कर लूँ। कुछ देर ढूँढ़ेंगे फिर खूद ब खूद लाइन से हट जाएँगे पर अब्बू हैं बड़े चिपकू। अब नहीं हटेंगे। लग गये हैं तो लगे ही रहेंगे।

वे देख रहे थे पीछे मुड़कर। उनके कागजात जिसके पास हैं दे दे उन्हें। शायद माँगने या उठाने में उम्र और हेकड़ी आड़े आ रही थी। कल-कल के लौंडों के साथ लाइन में लगिएगा तो यही होगा न भाई।

सामने वाला लड़का शरीफ था, उसने बढ़ा दिया। अब मैं क्या करूँ। क्या चिल्ला पड़ूँ कि जनाब राशिद साहब, क्या करने आये हैं आप? इकबाल और राशिदा को क्यों नहीं भेजा?

अब्बू ने पीछे को रुख किया। मर गये। उठाना चाहते हैं अपना प्रमाणपत्र। अब वे आएँगे और मेरे पैंरो पर झुककर उठा लेंगे उस सरकारी कागज को।

लेकिन भैया जूता तो उन्हीं का है। मुझे पहचान गये तो? मैंने जल्दी से दोनों पैरों को एक-दूसरे पर रखकर जूतों को गन्दा कर दिया। अब पहचानें!

वे झुक रहे थे। अब यह भी होना था मेरे खुदा। मैंने अपनी गर्दन कतार में ठीक सामने खड़े नौजवान की पीठ में गड़ा दी। कहीं अब्बू मुझे देख न लें। कहीं मैं अब्बू को न देख लूँ। कहीं हम दोनों एक-दूसरे को देख न लें। कहीं कोई और मुझे और अब्बू को एक ही कतार में लगा देख न ले।

जो मैंने देखा, वह मैंने नहीं देखा। जहाँ मैंने अब देखा, वह जगह खाली थी। वहाँ अब्बू नहीं थे। मेरी आँखें अब्बू को नहीं देख पा रही थीं। मेरे दो कदम आगे एक खाली जगह थी। अब्बू की खाली जगह। जिसे वे मेरे साथ भरने आये थे। अपनी मेरिट को एक आखिरी मौका देने आये थे। मेरे, इकबाल और राशिदा के मुकाबले में मेरे अब्बू खड़े थे। किसने खड़ा किया था उन्हें? बोलिए। मेरा खून गुनगुना होने लगा। फिर उबलने लगा। किसने खड़ा किया था उन्हें? किसने खड़ा किया था हम दोनों को एक ही कतार में साथ-साथ?

तो अब्बू को मैंने नहीं देखा। नहीं देखा तो बताना कैसा? किसी को भी नहीं। इकबाल और राशिदा को भी नहीं। अम्मी को तो कभी नहीं।

मैं कतार से हट गया। फैजाबाद? ऐसे में और कहाँ? मैंने टिकट खरीदा। मैं बस पर बैठा। हँसी मुझे तब तक नहीं आयी जब तक कि बस चल नहीं पड़ी।

अब सुनिए कि मेरी बगल वाली सीट पर बैठे सज्जन ने क्या कहा। वे बोले, "भाई, आपको क्या हो गया है, रोते ही जा रहे हैं।" मैंने जवाब दिया, "भाई, मैं रोने के लिए इस बस पर नहीं चढ़ा हूँ।" वे मुझे घूरकर चुप हो गये। मेरी हँसी चुप होने का नाम नहीं ले रही थी। मैं अपनी हँसी लिये बस पर चला जा रहा था। और अब्बू?

फैजाबाद पहुँचे न पहुँचे कि नाना ने खत थमा दिया। घर से आया था। उसे उन्नीस तक मिल जाना था। पर नामुराद मिला देर से। अब्बू ने होशियार करते हुए लिखा था - "बरखुर्दार, आप तीनों से बड़ी उम्मीदें हैं। ऐसी फीकी नौकरियाँ मेरे मयार पर खरी नहीं उतरती हैं। मैंने कभी... फार्म तक नहीं भरा इनका। मैंने कभी देखा तक नहीं इनकी ओर। ये आप क्या करने जा रहे है।"

खत में आगे भी कुछ लिखा था। उसे पढ़ने से पहले एक फैमिली सीक्रेट - मेरे यहाँ सभी की आदत है कि किसी भी बात को समझने के लिए बार-बार दुहराते हैं। उस को इतनी बार कहेंगे कि बस समझ में आ जाए।

खत में आगे था। ताकीद है कि बीस को लखनऊ न जाकर घर तशरीफ लाएँ। मुझे खुद बीस तारीख को एक जरूरी काम से बाराबंकी जाना है। शाम को लौटकर आपसे कुछ जरूरी बातें करनी हैं, राशिदा के बारे में? आप लखनऊ कतई न जाइएगा। इसे जरूरी समझें। सुबह बस पकड़कर घर पहुँच जाइएगा। शाम तक मैं वापस आ जाऊँगा। लखनऊ जाने की कोई जरूरत नहीं है। खुदा हाफिज। अब्बू।

https://www.hindiadda.com/mausam/